भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में सहभागिता एवं लैंगिक समानता

*डॉ. रीतेश जैन

स्त्री पुरूष समानता किसी भी समाज की वह स्थिति है जिसमें उपलब्ध संसाधनो एवं अवसरो की समानता के आधार पर स्त्री और पुरूष में कोई भेदभाव नहीं किया जाता । स्त्री हो या पुरूष सभी को सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक एंव इनसे सम्बद्ध निर्णय निर्माण प्रकिया में समान रूप से देखा जाता है। किसी भी देश की अपेक्षित प्रगति और उचित विकास का स्तर वहॉ की महिलाओं का जीवन स्तर तथा सामाजिक स्थिति है। समाज निर्माण के ये दो परस्पर पूरक तत्व है। फिर भी समाज के संचालन में एक की ही सक्रियता और दूसरे की प्रायः निष्क्रियता रही है। मानव स्थापित संख्यागत असंतुलन का अप्राकृतिक हस्तक्षेप के कई नकारात्मक परिणाम आये है। आधुनिक काल में पुरूष और नारी में भेद करने एवं भ्रूण हत्या के कारण नारी की संख्या घटने लगी और मानव समाज में संख्यागत असंतुलन होने लगा। यही से नारी का अभिशप्त स्वरूप का आरम्भ होता है। सिद्धान्त के धरातल पर स्त्रियों को पुरूषों के समान्तर अवश्य माना गया किन्तु व्यवहारिक धरातल पर नारी समाज को दूसरे स्थान पर रख कर उसकी उपेक्षा की गयी। परिणामस्वरूप भारत में जाति, सम्प्रदाय एवं धर्म के आधार पर विभेद की तुलना में लिंग भेद की स्थिति ज्यादा गम्भीर रूप से विद्यमान है।

सामाजिक गुण और विशेषता तथा सम्बद्ध अवसर के साथ स्त्री और पुरूषों के सम्बन्ध को जेन्डर कहते है। यह गुण अवसर और सम्बन्ध समाज निर्मित होते है। और इसे समाजिकरण की प्रकिया से सीखा समझा जाता है। यह समय और संदर्भ सहित परिवर्तनशील होता है। सामाजिक लिंग यह निर्धारण करता है कि किसी समाज में महिला एवं पुरूष के बीच उत्तरदायित्व, कार्य, निर्णय प्रकिया, स्त्रोत नियत्रंण के विषयों पर विभिन्नता और असमानता होती है। जेंडर व्यापक सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भ का एक भाग है।

जेंडर शब्द का प्रयोग स्त्री एवं पुरूष की समाजिक भिन्नता को दर्शाते हुए उनकी सामाजिक भूमिका प्रदान करता है। लिंग प्राकृतिक, जैविक, अपरिर्वतनशील एवं अटल है जबकि सामाजिक लिंग सामाजिक संस्कृतिक एवं मानव निर्मित अवधारणा है जो समय और संस्कृति के साथ बदलता रहता है। सामाजिक लिंग का विभेद समाज और संस्कृति द्वारा निर्मित होता

है। जिसे समाजिकरण की प्रक्रिया और सुदृढ बनाती है। प्रत्येक समाज स्त्री पुरूष के संदर्भ में उनके रहन–सहन , स्वतंत्रता, गुण एवं दायित्वों को विभाजित करता जिससे समाज का दृष्टिकोण बनता है तथा स्त्री और पुरूष का सम्बन्ध निर्धारित होता है। यह सम्बन्ध सामान्यतः प्रभुत्व एवं अधीनता का रहता है। इसे पितृसत्ता के रूप में निर्धारित किया जाता है।

पितृसत्ता, यह पुरूष प्रधान समाज को प्रतिलक्षित करता है जिसमें स्त्री पर पुरूष का प्रभुत्व रहता है। यह प्रभुत्व एवं आधिपत्य दैनिक जीवन में प्रत्येक स्तर पर होता है और इसके कई स्वरूप होते है। विभेदीकरण, उपेक्षा, नियंत्रण, अपमान, शोषण, हिंसा, दमन, अत्याचार। यह स्थिति परिवार, कार्यस्थल, सामाजिक , आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों सभी स्थानों पर दिखाई देती है। ये पितृ सत्तात्मक संरचना और व्यवस्था के मुख्य क्षेत्र है। राजनीतिक संस्थानों में स्पष्ट रूप से पुरूष प्रभुत्व दुनिया भर की राजनीतिक व्यवस्थाओं में परिलक्षित है। समसामायिक विश्व में राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी के संदर्भ में स्थिति नगण्य है। 1960 के दशक तक लिंग असमानता का राजनीतिक महत्व नही माना जाता था। महिला और पुरूष के भेद को एक सामाजिक समस्या के रूप में स्वीकार किया जाता था। परम्परागत राजनीतिक चिंतन में महिलाओं के प्रति यह मान्यता है कि वे समाज में समान अवसर प्राप्त कर सकें यह केवल बीसवीं शताब्दी की ही देन नहीं है। इस संदर्भ में पहली पुस्तक मेरी वोल्स्टानक्राफ्ट के द्वारा लिखी गयी पुस्तक ''विंडिकेशन ऑफ द राईट ऑफ वुमन'' है जिसमें आधुनिक संदर्भ में महिलाओं की राजनीतिक स्वतंत्रता एवं अधिकारो की चर्चा की गयी। 19वी शताब्दी मे महिला आंदोलन एक संगठित रूप लेने लगा जिसमे महिलाओं को पुरूषो के समकक्ष कानूनी एवं राजनीतिक अधिकार को प्रमुख मांग के रूप मे उठाया गया। इसमे पहली सफलता 1893 मे न्यूजीलैंड मे मिली जब स्त्री मतदान को पहली बार स्वीकृति मिली। अमेरिका मे 1920 मे संविधान के 19वें संसोधन द्वारा स्त्रियो को मतदान का अवसर मिला। ब्रिटेन मे 1928 मे पुरूषो के समान मतदान का अधिकार प्राप्त हुआ।

राजनीतिक सहभागिता राजनीतिक प्रक्रिया मे जनता की ऐसी भूमिका है जिससे वह राजनीतिक प्रक्रिया के विभिन्न चरणो मे सक्रिय रूप से अपनी भूमिका का निर्वाह करती है तथा अपना योगदान देती है। लोकतंत्र मे जनता की सहभागिता तभी सार्थक हो सकती है जब जनता लोकतांत्रिक प्रक्रिया के औपचारिक चरणो का निर्धारण करें। मतदान मे भाग लेने वाले एक मतदाता की मत देने की क्रिया मात्र को राजनीतिक सहभागिता नही माना जा सकता किन्तु यदि वह मत देने, मतदान के मुद्दो, उद्देश्यो व विकल्पो की सटीक पहचान व विचारधारागत चयन तथा अपने सुनिर्धारित दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति को अभिप्रेरित कर

रहा है तो उसे राजनीतिक प्रक्रिया का वास्तविक सहभागी माना जा सकता है। राजनीतिक सहभागिता को नार्मन एच. पाई और सिडनी बर्बा ने अपने लेख ''पॉलिटिकल पार्टिशिपेशन'' मे राजनीतिक सहभागिता को आम लागो की वे विधिसम्मत गतिविधियॉ माना गया है जिनका उद्देश्य राजनीतिक पदाधिकारियो के चयन और उनके द्वारा लिए जाने वाले निर्णयो को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करना होता है। राजनीतिक प्रक्रिया के संदर्भ मे लैंगिक समानता का तात्पर्य है कि राजनीति और राजनीतिक कार्य व्यवहार से जुडे प्रत्येक क्षेत्र मे महिलाओ को पुरूषो के समान भागीदारी प्राप्त होनी चाहिए। स्त्रियो को बिना किसी भेदभाव के न केवल मताधिकार बल्कि प्रतिनिधि के रूप मे निर्वाचित होने का अधिकार होना चाहिए। प्रतिनिधि संस्थाओ और शासन प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र मे निर्णय लेने वाली सभी संस्थाओं संरचनाओ मे न केवल सिध्दांत वरन व्यवहार मे भी महिलाओ को पुरूष के बराबर की भागीदारी भूमिका और शक्ति प्राप्त होनी चाहिए। शासक वर्ग का सक्रिय समर्थन विरोध या प्रदर्शन सहित शासक वर्ग पर दबाब डालने के लिए विविध संवैधानिक साधनो का प्रयोग भी इसमे शामिल है।

राजनीतिक व्यवस्थाओ मे महिलाओ की भागीदारी कितनी होनी चाहिए इस संबंध मे महिलाओ की प्रस्थिति पर संयुक्त राष्ट्र आयोग ने सुझाव दिया है कि निर्णय लेने वाली सभी संस्थाओ मे महिलाओ की भागीदारी कम से कम 30 प्रतिशत होनी चाहिए। एक आदर्श के रूप मे आज विश्व के सभी लोकतांत्रिक राष्ट्रो द्वारा लैंगिक समानता की इस मूल मान्यता को सिद्धांत के रूप मे स्वीकार कर लिया गया है। व्यवहार के अन्तर्गत चुनावो मे महिलाओ की भागीदारी और भूमिका निरन्तर बढ रही है लेकिन निर्वाचित संस्थाओ मे उनका प्रतिनिधित्व और संपूर्ण राजनीतिक प्रक्रिया पर उनका प्रभाव आज भी बहुत कम है। इसी तथ्य को 21वी सदी मे भारत मे राजनीतिक व्यवस्था मे भागीदारी को लैंगिक समानता के संदर्भ मे विश्लेषित करना प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य है।

भारत की स्वतंत्रता के 73 वर्षो मे हम इस बात पर गर्व करते रहे है कि अनेक विकासशील देशो की तुलना मे भारत मे लोकतंत्र सफल रहा है। दूसरी ओर सामाजिक, आर्थिक व अन्य क्षेत्रो मे भी विकास के नये सोपान अर्जित किए है। किन्तु यह आज भी आकलन का विषय रहा है कि क्या हम उन मूलभूत लक्ष्यो की प्राप्ति मे सफल रहे है जो संविधान के निर्माण के समय भारतीय राज व्यवस्था के आदर्शो और लक्ष्यो के रूप मे चिन्हित किए गए थे ?

भारतीय संविधान में राजनीतिक लोकतंत्र के साथ साथ सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र को भी लोकतंत्र की सफलता के लिये पूर्व शर्त के रूप में स्वीकार किया गया है। इसी कारण संविधान में ''सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक न्याय को एक महत्वपूर्ण लक्ष्य के रूप में

स्वीकार किया गया है। संविधान निर्माताओं द्वारा राजनीतिक न्याय से पूर्व सामाजिक व आर्थिक न्याय के संकल्प में यह भाव अन्तर्निहित है कि राजनैतिक लोकतंत्र सामाजिक व आर्थिक लोकतंत्र का अनुसरण है एवं इसकी सफलता के लिए अनिवार्य है। राजनीतिक न्याय की स्थापना राजनीतिक प्रक्रिया व सत्ता मे सभी वर्गो की न्याय सम्मत भागीदारी को सुनिश्चित करने के लक्ष्य की प्राप्ति व्यापक सामाजिक व आर्थिक परिवर्तनो के माध्यम से ही संभव थी। इन परिवर्तनों के माध्यम से समाज के दुर्बल और वंचित वर्गो का उन परम्परागत अयोग्यताओं से मुक्त किया जाना अपेक्षित था जो उनकी क्षमताओं को कुंठित करती है। और वास्तविक समानताओं का उपयोग करने के उनके अवसरो को बाधित करती है।

यदि इस राजनैतिक सहभागिता के प्रश्न की महिलाओं के विशेष संदर्भ में समझा जाये तो कहा जा सकता है कि महिलाओं को सामाजिक रूढियों, परम्परागत रूप से विद्यमान रही असमानता पूर्ण और शोषण की सामाजिक स्थितियों और उनकी स्वतंत्रता को सीमित करने की परिस्थितियों से मुक्त किये बिना उनके द्वारा राजनितिक प्रक्रिया के विभिन्न चरणों में उनकी सार्थक भागीदारी सुनिश्चित नही की जा सकती।

भारतीय महिलाओ ने 1917 मे सर्वप्रथम सार्वभौमिक व्यस्क मताधिकार की मांग की। भारत शासन अधिनियम 1935 द्वारा ब्रिटिश सरकार ने संपत्ति और शिक्षा के आाधार पर 21 वर्ष से उपर की महिलाओ को मताधिकार सीमित रूप मे प्रदान किया गया। सर्व प्रथम भारत में व्यस्क मताधिकार की बात 1950 में स्वीकार किये गये संविधान द्वारा लागू की गयी। मताधिकार के साथ ही विधायिकाओ मे निर्वाचित महिला प्रतिनिधियो की संख्या नीति निर्धारण, निर्णय निर्माण प्रक्रिया मे वास्तविक भागीदारी नगण्य रही। इस संदर्भ मे नार्डिक देशो को छोडकर अधिकांश लोकतांत्रिक देशो द्वारा अपनी विधायिकाओ मे महिलाओ को पर्याप्त भागीदारी प्रदान नही की गयी। सांख्यिकी 2014 से यह तथ्य स्पष्ट है कि महिलाओ का विधायिकाओ मे प्रतिनिधित्व का औसत 21.09 प्रतिशत दोनो सदनो मे संयुक्त रूप से है। राजनीति मे महिलाओ की सीमित भागीदारी के लिए बडा उत्तरदायी कारण व्यक्तित्व, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, पर्यावरण मुख्य कारक है। पारम्परिक सामाजिक संरचना के मूल्य परम्पराए, रीति रिवाज, सामाजिक, आर्थिक परिस्थिति आदि अन्तर्संबंधित तत्व राजनीतिक सहभागिता का स्तर निर्धारित करते है। ऐतिहासिक रूप मे समाज की परम्पराओ मूल्यो को अग्रेषित करने मे महिलाओ से अपेक्षाए ज्यादा की जाती है। परिवारो मे समाजीकरण की प्रक्रिया मे महिलाओ को गैर परम्परागत भूमिकाओ के लिए तैयार नही किया जाता है। इन स्थितियो के सापेक्ष मे भारत मे महिलाओ की स्थिति के ऐतिहासिक विश्लेषण मे बेहतर समझ विकसित की जा सकती है।

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति

प्रचीन भारत मे त्याग, धैर्य व शक्ति जैसे गुणो की प्रतिमूर्ति के कारण महिलाओ को माता की भूमिका मे उच्च स्थान प्राप्त रहा है। वैदिक काल मे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्रो मे महिलाओ को बराबरी का स्थान प्राप्त था। परंतु उत्तर वैदिक काल मे महिलाओ की समाज मे स्थिति मे अत्यधिक गिरावट आयी। उनकी स्वतंत्रता मे कमी के साथ ही वे सुरक्षा की वस्तु बन गयी।मध्यकालीन भारत महिलाओ की स्थिति में गिरावट का साक्षी रहा है। इस काल मे कई सामाजिक कुरीतियो जैसे पर्दा प्रथा, बाल विवाह, कन्या भ्रूण हत्या आदि ने समाज मे महिलाओ की स्थिति को दयनीय बना दिया। इस प्रकार की कुप्रथाओ ने परिवार व समाज में महिलाओ की भूमिका को सीमित कर दिया। ब्रिटिश शासन के दौरान भारत मे विधायी कानून निर्माण प्रक्रिया से सामाजिक संरचना मे व्याप्त कुरीतियो को दूर करने का प्रयास किया गया। समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार जो कि पश्चिमी उदारवाद से प्रेरित थे, को लागू करने की शुरूआत की गयी। विविध सामाजिक–धार्मिक सुधारकों द्वारा भारतीय समाज में व्याप्त कुरूतियों को दूर करने के लिए व्यापक स्तर पर जन जागरण सुधार आन्दोलन एवं निवारक कानूनों के निर्माण के माध्यम से महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन समाज सुधारकों में प्रमुख तौर पर राजा राममोहनराय, ईश्वरचन्द विधासागर, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गॉधी, जवाहर लाल नेहरू एवं अम्बेडकर ने प्रमुख भूमिका का निर्वहन किया। इन सुधारको द्वारा यह अनुभव किया गया कि समाज में महिलाओं के प्रति भेदभाव एवं अन्याय के प्रति लोगो की जागरूकता, संवेदनशील एवं शिक्षा के माध्यम से ही किया जा सकता है।

1887 में स्थापित राष्ट्रीय सामाजिक परिषद इस दिशा में पहला महत्वपूर्ण प्रयास था जिसके माध्यम से सुधारकों ने महिला उत्थान हेतु आवश्यक परिवर्तनों एवं संस्थाओं पर विमर्श किया। 19 वी. शताब्दी के इस महत्वपूर्ण सामाजिक धार्मिक पुर्नजागरण के परिणामस्वरूप महिलाओं की स्थिति में सुधार एवं उत्थान की प्रकिया प्रारम्भ हो गयी। महिलाओं के उत्थान के संघर्ष की प्रकिया के तीन प्रमुख आयाम रहे। 1. समाज सुधार के लिए आवश्यक कानून बनाये जायें। 2 शिक्षा के अधिक अवसरों की उपलब्धता 3 आधारभूत राजनीति अधिकारों की उपलब्धता। शुरू के दो सुधारो पर 19 वीं शताब्दी में एवं राजनीतिक जागरूकता पर 20 वीं शताब्दी की शुरूआत से ध्यान केन्द्रित किया गया। महिलाओं की राजनीतिक जागरूकता अधिकारों एवं सहभागिता की प्रकिया स्वंतंत्रता आंदोलन के अंतिम चरण में तीव्रता से विकसित हुयी। इस दिशा में स्थापित महिला संगठनों जैसे महिला

भारतीय एशोसिएशन(WIA, 1917) , भारतीय राष्टीय महिला परिषद (NCWI, 1925) एवं अखिल भारतीय महिला परिषद (AIWC, 1926) अग्रणीय रहे। व्यस्क मताधिकार के साथ साथ महिलाओं के उत्थान एवं लैगिंक समानता हेतु विधायी कानून निर्माण की आवश्यकता पर बल इन सामाजिक संगठनो द्वारा दिया गया। इस दिशा में अग्रणी भूमिका एनीबेसन्ट की होमरूल लीग मूवमेंट की शुरूआत में थी। मार्ग्रट कजिन जोशी, हीराबाई टाटा, सरोजनी नायडू एवं एनीबेसन्ट के प्रयासों के परिणाम स्वरूप सर्वप्रथम 1920 में सर्वप्रथम मद्रास विधायिका में महिलाओं का मतदान का अधिकार प्राप्त हुआ।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में महात्मा गॉधी के नेतृत्व में महिलाओं ने राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेना शुरू किया। महिलाओं के व्यक्तित्व में अर्न्तनिहित मूल्यों जो कि अहिसंक संषर्घ के लिए आवश्यक है, को पहचानते हुए गॉधी ने स्वत्रंता आंदोलन में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका को पहचाना। असहयोग आंदोलन, 1920 एवं सविनय अवज्ञा आंदोलन 1930 आदि में बहिष्कार पिंकेटिग, स्वदेशी प्रयोग एवं अन्यायपूर्ण सरकारी नीतियों, कानूनों आदि जैसी नयी तकनीकों का प्रयोग महिलाओं द्वारा किया गया। विरोध प्रदर्शनो, रैलीयां, शराबबन्दी एवं जेल गमन आदि कार्यक्रमों में शहरी महिलाओं के साथ ग्रामीण महिलाओं का भी योगदान रहा। राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन की उग्रवादी धारा में भी महिलाओं ने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अपना योगदान दिया । इस प्रकार महिलाओं की भागीदारी से ही राष्टीय आंदोलन एक जन आंदोलन का रूप ले पाया। महिलाओं द्वारा सत्याग्रह एवं रचनात्मक कार्यक्रमों में महिलाओं की भूमिका को स्वीकार कर गॉधी ने समाज में राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता एवं योगदान को पुनजीर्वित किया।

1926 में डॉ. मुथुला लक्ष्मी रेड्डी ने मद्रास विधान परिषद में नामांकित होकर और 1932 में प्रांतीय विधायिकाओं के चुनावों में विजयी कुछ महिलाओं ने निर्वाचित होकर विधायिकाओं में महिलाओं ने अपनी उपस्थिति दर्ज की। इसी समय विजय लक्ष्मी पंडित, पदमजा नायडू, राजकुमारी वेगम हामिद अली, अमृता कौर और सुचेता कृपलानी ने भारतीय राजनीति में अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति प्रमाणित की। इस प्रकार महिलाओं की प्रत्यक्ष राजनीतिक सहभागिता ने उनमें आत्मविश्वास पैदा कर सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में व्याप्त बंधनो को तोडा और आत्म विश्वास का संचार हुआ। इन सबके बाबजूद महिलाओं की राजनीतिक भूमिका का प्रश्न इनकी कम मात्रा में राजनीतिक उपस्थिति से बना रहा।

भारत की ब्रिटिश शासन से आजादी के बाद महिलाओं को लोकतांत्रिक प्रकिया में भाग लेने का व्यापक अवसर प्राप्त हुआ। महिलाओं की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं वैधानिक उपायों से भारत सरकार द्वारा कई प्रसास किये गये। राष्ट्रीय और राज्यों की राजनीति में

भागीदारी शुरू करके महिलाओं ने अपनी राजनीतिक जागरूकता का परिचय दिया। 1950 में अपनाये गये भारतीय संविधान द्वारा भी संघ सरकार , राज्य सरकार एवं स्थानीय स्तर पर स्वशासन की संस्थाओं की स्थापना भारतीय गणराज्य में की गई। न्याय, स्वतन्त्रता एवं समानता की सुनिश्चिता की गारंटी देने वाला भारतीय संविधान में महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान बनाकर उनके संवैधानिक अधिकार सुनिश्चित किये गये जो कि महिलाओं को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समान किये गये जो कि महिलाओं को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समान अवसर एवं उत्थान के विभिन्न अवसर प्रदान करते

भारतीय संविधान मे लैंगिक समानता हेतु प्रावधान

–अनु.14 विधि के समक्ष समता और विधि का समान संरक्षण इसके द्वारा विधि द्वारा सभी प्रकार के भेदभाव का निषेध किया गया है।

– अनु.15 धर्म नस्ल जाति, लिंग और जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का अंत किया गया है। साथ ही अनु. 15 (3) राज्य को स्त्रीयों एवं बालकों के विशेष उपबंध करने की बात करता है। इसी के तहत सरकार ने महिलाओं के आरक्षण सम्बन्धी प्रावधान बनाये है।

– अनु. 16 प्रत्येक व्यक्ति को राज्य द्वारा नियोजन में अवसर की समानता प्रदान करता है। राज्य द्वारा किसी पद के सम्बन्ध में केवल धर्म जाति मूलवंश , लिंग जन्म स्थान, निवास स्थान के आधार पर कोई भी नागरिक अयोग्य नही ठहराया जायेगा।

– अनु. 39 पुरूष और महिला के लिए समान कार्य के लिए समान वेतन की व्यवस्था करता हैं।

– अनु. 42 कार्य की मानवोचित दशाओं के साथ महिलाओं के मातृत्व अवकाश की व्यवस्था करता है।

संविधान में 73वें एवं 74 वें संविधान संसोधन 1993 द्वारा स्वायत्त शासन की समस्त व्यवस्था मे मूलभूत सुधार और ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र की स्थानीय स्व–शासन संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिये जाने के साथ स्थानीय संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी बढाने में एक महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रो की स्थानीय स्व–शासन की संस्थाओं में एक तिहाई पद महिलाओं को आरक्षण का प्रावधान किया गया है। इस आरक्षण के परिणाम स्वरूप लगभग 10.50 लाख महिलायें अर्थात 37 प्रतिशत विभिन्न पदों पर महिला नेतृत्व की भूमिका निभा रही है। स्थानीय स्तर पर महिला नेतृत्व राजनीति में महिलाओं की प्रभावपूर्ण भागीदारी की वास्तविक शुरूआत है। इसमें 2009–10 में कुछ राज्यों के स्थानीय निकायों में महिला आरक्षण 33. प्रतिशत से बढाकर 50 प्रतिशत कर दिया गया है। इस आरक्षण की व्यवस्था के परिणाम स्वरूप सकारात्मक परिणाम आ रहे है। तथा आने वाले

समय में इस व्यवस्था के वास्तविक एवं पूर्ण उद्देशों की प्राप्ति कर ली जायेगी। शिक्षा एवं सामान्य सूझबूझ से महिलाओं ने इस संस्थाओं के प्रशासन में पारदर्शिता एवं रचनात्मकता का अपनाया है।

स्वतंत्रता पश्चात महिलाओं द्वारा पर्यावरण आंदोलनों, शराब बन्दी प्रदर्शनों, अपनी गरिमा एवं हितों के लिए चलाये गये आंदोलनो में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया गया। इन सबके बाबजूद भारत में राजनैतिक परिदृश्य में महिलाओं के लिए स्थान कम ही मिल पाया और पुरूष प्रभुत्व की स्थिति दिखाई दी। ससंद एवं राज्यों की विधान सभाओं में निर्वाचित प्रतिनिधियों के रूप में इनकी संख्या बहुत कम रही है। महिलाओं को संसद में कुछ स्थान प्राप्त होने के बाबजूद उनकी संख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्राप्त नही हो पाया है। (तालिका 1.1)

तालिका 1.1 लोक सभा में निर्वाचित महिलओं की संख्या एवं प्रतिशत

वर्ष	स्थान	महिला सासंद	महिला सासंदो का प्रतिशत
1952	499	22	4.41
1957	500	27	5.40
1962	503	34	6.76
1967	523	31	5.93
1971	521	22	4.22
1977	544	19	3.29
1980	544	28	5.15
1984	544	44	8.90
1989	517	27	5.22
1991	544	39	7.17
1996	543	39	7.18
1998	543	43	7.92
1999	543	49	9.02
2004	543	45	8.03
2009	543	59	10.86
2014	543	62	11.04
2019	543	78	14.00

स्रोत : निर्वाचन आयोग

तालिका 1.2 राज्यसभा में निर्वाचित महिलओं की संख्या एवं प्रतिशत

वर्ष	स्थान	महिला सासंद	महिला सासंदो का प्रतिशत
1952	219	16	7.3
1957	237	18	7.6
1962	238	18	7.6
1967	240	20	8.3
1971	243	17	7.0
1977	244	25	10.2
1980	244	24	9.8
1985	244	28	11.4
1990	245	38	15.5
1996	223	20	9.0
1998	223	19	8.6
2006	245	25	10.20
2009	245	22	8.97
2014	245	29	11.83
2019	238	25	9.52

Source: Rajyasabha.nic.in

दोनों तालिकाओं से स्पष्ट है कि भारत में ससंद के दोनों सदनों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व कुल स्थानों की तुलना में बहुत कम है। परन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट है कि यह संख्या क्रमशः बढ रही है। सत्रहवीं लोक सभा के आम चुनावों में 78 महिला सांसदों के साथ ही यह 14 प्रतिशत तक पहुॅची है। परन्तु यह अभी भी देश की आधी आबादी का वास्तविक प्रतिनिधित्व नही है। लोक सभा की तुलना में महिला सांसदो का ज्यादा प्रतिनिधित्व का कारण राज्यसभा मे अप्रत्यक्ष निर्वाचन एवं नामांकन की प्रणाली है। विधायिकाओं के निर्वाचन में महिला प्रत्याशियों की संख्या पुरूषों की तुलना में भी काफी कम है। 2019 के आम चुनावों में मात्र 724 महिला प्रत्याशियों ने चुनाव लडा जो कि 7250 पुरूषों प्रत्याशियों की तुलना में बहुत कम है। विधायकों के चुनाव में महिला प्रत्याशियों को इतनी कम संख्या में राजनैतिक

दलो द्वारा टिकिट का वितरण करना प्रर्दशित करता है कि राजनैतिक दल मानते है कि महिला प्रत्याशियों कि चुनाव में विजयी होने की क्षमता नही है। भारत में निर्णय निर्माण प्रकिया एवं नेतृत्व कार्य भूमिका में लैगिंक असमानता में बडा अन्तर मंत्रिपरिषद में महिलाओं की कम संख्या भी महिलाओं के हित में कानून निर्माण एवं राजनैतिक सहभागिता में एक बडी बाधा है। राज्यों के विधान सभाओं में भी महिला विधायको ंकी संख्या का प्रतिशत भी कभी 12 प्रतिशत से उपर नही गया।

केन्द्र के साथ साथ राज्यों के मंत्रिमण्डलों में महिलाओं को बहुत कम संख्याओं में मंत्री परिषदों में स्थान एवं कम महत्व के विभाग जैसे समाज कल्याण, स्वास्थ्य आदि दिये जाते है। भारत में महिलाओं की राज्य विधायिकाओं में अल्प प्रतिनिधित्व की वृति का विशलेषण यह स्पष्ट करता है कि समाज के अन्य क्षेत्रों के साथ राजनैतिक परिदृश्य में भी लैगिंक भेदभाव की जडें व्याप्त है। इसका अन्तर्निहित कारण पितृ सत्तात्मक संरचना, पुरूष राजनीतिज्ञों द्वारा महिलाओं को पर्याप्त राजनैतिक स्थान नही दिया जाना है।

भारतीय राजनीति में महिलाओं की स्थिति एवं भूमिका का न्यूनाधिक रूप मे होने का कारण उनकी नेतृत्वकारी भूमिका को मान्यता प्राप्त नही होना है। यद्यपि भारत में शासन अध्यक्ष के रूप में प्रधानमंत्री इन्दिरा गॉधी का कार्यकाल जो कि दुनिया में महिला प्रधानमंत्री के रूप में सबसे दीर्घकाल है, शासन के नेतृत्व कार्य भूमिका का बडा उदाहरण है। राजनैतिक दलो के अध्यक्ष के रूप में जैसे कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में सोनिया गॉधी, बसपा की मायावती, तृणमूल कांग्रेस की ममता बनर्जी एवं एआईडीएमके की जयललिता और विभिन्न मंत्रालयों के मंत्री जैसे सुषमा स्वराज, मेनका गॉधी आदि राजनैतिक परिदृश्य में महिलाओं की उपस्थिति का सशक्त उदाहरण है। आजादी के बाद भारत में पर्यावरण संरक्षण आंदोलनों, नारीवादी आंदोलनों, मूल्य वृद्धि के विरोध मे रैलीयों महिला संगठनों द्वारा सरकार को महिला हित मे कार्य करने हेतु दबाब डालने आदि विविध कार्यो से महिलाओं की राजनैतिक कौशल एवं भूमिका सिद्ध हुई है। परन्तु विभिन्न व्यवसायों या कार्य क्षेत्रों की हाई प्रोफाईल महिलायें ही राजनीति में अपना स्थान बना सकी है।

आम भारतीय महिलाओं के लिए राजनैतिक क्षेत्र प्रायः बन्द ही रहा है। यह भी एक तथ्य है कि भारतीय राजनीति में महिलाओं की सहभागिता के मुददे को कभी गंम्भीरता से नही लिया गया । राजनीतिक जागरूकता राजनैतिक दलों की सदस्यता, मतदान एवं निर्णय निर्माण प्रकिया को प्रभावित करने में आम भारतीय महिलाओं की प्रभावी भूमिका नही है। यह भी एक कटु सत्य है कि भारतीय राजनीति में धनबल, भुजबल की भूमिका के कारण महिलायें राजनैतिक सहभागिता से वंचित है। भारतीय सामाजिक संरचना

में महिलाओं को पुरूषो की सहायक भूमिका में पालना भी राजनैतिक सहभागिता के अन्तर को बढाता है।

लोकतांत्रिका शासन प्रणाली के अन्तर्गत महिलाओं की राजनैतिक व्यवस्थाओं में भागीदारी के स्तर को राजनैतिक दलो के द्वारा महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया जाता है। स्वत्रंत प्रत्याशियों की तुलना में राजनैतिक दलों द्वारा नामांकित प्रत्याशियो की चुनाव जीतने की ज्यादा दर राजनीतिक दलो की भूमिका सिद्ध करते है। निर्वाचनों मे धन की भूमिका भी महिलाओं के चुनाव लडने में बडी बाधा है। महिलाओं की भूमिका घर तक ही सीमित एवं राजनीति उनकी रूचि का क्षेत्र न होना जैसी मानसिकता भी राजनैतिक सहभागिता को प्रभावित करती है। महिलाओं की राजनैतिक सत्ता में भागिदारी को सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक पर्यावरण का स्तर भी प्रभावित करते है। भारत में महिलाओं की शिक्षा का स्तर कम होना, निषेधकारी सामाजिक, सास्कृतिक प्रतिमान और अस्वस्थ्य राजनीतिक पर्यावरण आदि कारक महिलाओं का निर्णय निर्माण प्रक्रिया से वंचित करते है।

वर्तमान में महिलायें चिकित्सा, विधि, पुलिस–प्रशासन, इंजिनियरिग, व्यवसाय एवं कला आदि क्षेत्रों में अवसर मिलने पर उन्होंनें अपनी क्षमता एवं कौशल से सफलता प्राप्त कर रही है। परन्तु अभी महिलाओं को राजनीतिक क्षेत्र में आवश्यक स्थान नही मिला है। इस प्रकार राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं के साथ असमानता के निराकरण हेतु विशेष प्रयासो की आवश्यकता है। मूल प्रश्न महिलाओं की निर्णय निर्माण प्रकिया में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का है। परन्तु राजनीतिक दलो की सांगठनिक संरचना में पुरूष राजनीतिज्ञों का ही प्रभुत्व है। विभिन्न महत्वपूर्ण राष्ट्रीय मुद्दों, बजट एवं नीति निर्माण में महिलाओं की आधी आबादी के अनुपात में उनकी आवाज सुनी नहीं जाती है। लोकतंत्र की सफलता हेतु महिलाओं की भागीदारी राजनीतिक दलों में उनकी सक्रिय भूमिका एवं विधायिकाओं में निर्वाचित महिला सदस्यों की संख्या में वृद्धि के साथ–साथ उन्हें नीति निर्माण प्रकिया की मुख्यधारा से जोडा जाना जरूरी है। इन परिस्थितियों में महिलाओं को विधायिकाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है।

स्थानीय निकाय संस्थाओं में महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण जिसे कुछ राज्यों जैसे बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान आदि में बढाकर 50 प्रतिशत तक बढाया गया है, के सकारात्मक परिणाम दिखाई दे रहे है। पिछले कुछ दशकों में विधायिकाओं के चुनावों में महिला मतदाताओं की भागीदारी का प्रतिशत भी निरन्तर बढना एक सकारात्मक परिवर्तन है। परन्तु लोकतंत्र की वास्तविक सफलता एवं भागीदारी की सुनिश्चिता हेतु विधायी संस्थाओं (लोक सभा एवं राज्यों की विधान सभाओं) में महिला प्रतिनिधित्व बढाने के लिए प्रमुख रूप से दो

उपाय अपनाये जा सकते है। प्रथम कानून बनाकर इन संस्थाओं में महिला आरक्षण। द्वितीय राजनीतिक दलों के माध्यम से आरक्षण दिया जाये। इस व्यवस्था के अन्तर्गत राजनीतिक दलो को इसके लिए कानून निर्माण कर बाध्य किया जा सकता है कि उनके द्वारा अपने उम्मीदवारों में से एक निश्चित प्रतिशत महिला उम्मीदवार होने आवश्यक हैं। भारत में जन प्रतिनिधित्व अधिनियम में संशोधन करते हुऐ उम्मीदवारों के प्रसंग में आरक्षण की इस व्यवस्था को अपनाया जा सकता है कि प्रत्येक राजनीतिक दल राज्य वार अपने उम्मीदवारों की सूची में एक तिहाई स्थान महिला उम्मीदवारों को सुनिश्चित करें।

भारत में यद्यपि राजनीतिक दलो एवं अन्य व्यक्तियों द्वारा द्वितीय मार्ग की तुलना में प्रथम मार्ग अपनाने पर ही बल दिया और डेढ दशक से इस दिशा में प्रयास किये जा रहे है। 1990 के दशक से भारतीय राजनीति में महिला आरक्षण का मुद्दा राजनीतिक दलों के चुनावी घोषणा पत्रों, संसद के सदनों की विधायी प्रकिया के बीच धूमता रहा है। सभी राजनीतिक दलो द्वारा यह वादा किया जाता है कि उन्हें सत्ता प्राप्त होने पर कानून निर्माण कर विधायी संस्थाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई स्थान आरक्षित किया जायेगा। यह मुद्दा राजनीतिक दलों द्वारा प्रायः चुनावी राजनीति का ही विषय रहा है। राजनीतिक दलों के बीच मतभेद इस बात पर अधिक है कि महिलाओं के विभिन्न वर्गो को इस विधायी आरक्षण की प्रकिया में किस प्रकार भागीदारी प्रदान की जाये। सभी राजनीतिक दलो में कुछ लोग अवश्य है जो विधायी संस्थाओ में महिला आरक्षण के प्रति मानसिक प्रतिबद्धता रखते है। महिला आरक्षण विधेयक अब तक संसद में 7 बार अलग अलग सरकारो के कार्यक्रम मे प्रस्तावित किया जा चुका है लेकिन अभी तक यह विधेयक सभी दलों के बीच सहमति प्राप्त न कर पारित नही हो पाया है। भारतीय राजनीति मे लिंग भेद से ज्यादा जाति संप्रदाय के विभेदो को ज्यादा मुरवर होना उस विधेयक के कानून निर्माण में बडी बाधा है। अतः महिला आरक्षण को अपनाया जाता है तो आरक्षण के भीतर आरक्षण की स्थिति को स्वीकार कर महिला आरक्षण को जातिगत और सांप्रदायिक आधर पर विभाजित स्थिति मे स्वीकार करने पर विधेयक की मूल भावना को नुकसान पहुचेगा। वर्तमान 17वी लोकसभा मे 78 महिला सांसद है। विधेयक पारित होने पर 181 स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित हो जायेगें अर्थात बडी संख्या मे सांसदो के निर्वाचन क्षेत्र उनसे छिन जायेंगे। वस्तुतः महिला आरक्षण का मुद्दा राजनीति से प्रेरित हो गया है।

महिला आरक्षण के वर्तमान प्रारूप में कुछ कमिया है। प्रथम इस विधेयक के मौजूदा प्रावधानों के अनुसार लोकसभा के लिए महिला आरक्षण का केवल उन्हीं राज्यों में अपनाया जा सकेगा जिन राज्यों से कम से कम तीन सदस्य लोकसभा के लिए चुने जाने है। परिणामतः 10

राज्यों और दिल्ली के अतिरिक्त अन्य केन्द्र शासित क्षेत्रों में लोकसभा के लिए महिला आरक्षण को नही अपनाया जा सकेगा। द्वितीय, प्रस्तावित विधेयक के अनुसार महिला आरक्षण को चक्रानुक्रम में अपनाया जायेगा और आरक्षित सीट का निर्णय लॉटरी से होगा। परिणाम स्वरूप लोकसभा सदस्यों और विधायकों का अपने निर्वाचन क्षेत्रों से निरन्तर लगाव का भाव कमजोर होगा। राजनीतिक क्षेत्र में लैगिंक असमानता की समाप्ति हेतु सुधार के लिए विधायी संस्थाओं में महिला आरक्षण एक प्रभावी उपाय है। इसके साथ ही महिलाओं की राजनीतिक स्थिति में सुधार एवं सार्वजनिक जीवन में उनकी अधिक भागीदारी के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अन्य सुधारो की भी अपनाये जाने की आवश्यकता है।

समाज में उन सॉस्कृतिक , सामाजिक मूल्यों एवं मनोवृति को हत्तोत्साहित किया जाना जरूरी है। जो कि महिलाओं पर पुरूषों की श्रेष्ठता स्थापित करती है। सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी को प्रोत्साहित करने हेतु उन्हें घर की चार दीवारी से बाहर निकाल कर सशक्त बनाया जाये। राजनीतिक दलों को स्वयं ही लोकसभा एवं विधानसभा चुनावों में प्रत्याशियों की सूची में अधिकाधिक संख्या में महिलाओं को उम्मीदवार बनाने की प्रतिबद्वता प्रदर्शित करनी होगी। इस सम्बन्ध में कानून बनाया जाकर सभी राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय राजनीतिक दलों को उनके कुल उम्मीदवारो में न्यूनतम 30 प्रतिशत महिला उम्मीदवार होना आवश्यक है। तथा यह राज्यवार होनी चाहिए। राजनीतिक दलो को भी अपने संगठन के प्रमुख पद महिलाओ को नियुक्त कर लैंगिक समानता की दिशा मे एक कदम आगे बढाया जा सकता है। राजनीतिक पर्यावरण में इस बात पर बल दिया जाये कि महिलायें राजनीतिक क्षेत्र के संचालन, नेतृत्व एवं निर्णय, निर्माण में सक्षम समर्थ है। महिलाओं को अपने निर्वाचन व्यवहार में अधिक तार्किक परपिक्व समझ विकसित कर मतदान करने के साथ साथ मतदान प्रतिशत को बढाये जाने को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है।

भारत में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता और सार्वजनिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में भागीदारी मात्र मतदान के अधिकार तक सीमित नही हो सकती परन्तु देश में लिंग भेद की दीवार को निर्णय निर्माण प्रक्रिया में राजनीतिक सक्रियता एवं राजनीतिक जागरूकता भी समान रूप से जुडी हुई है। विश्व आर्थिक मंच की वैश्विक लैगिंक विभेद रिपोर्ट 2020 के अन्तर्गत 153 देशों की सूची में भारत जैसे विश्व के सबसे बडे एवं परिपक्व लोकतंत्र की 112 वॉ स्थान राजनीतिक क्षेत्र में लैंगिक असमानता की प्रमुख समस्या को उजागर करता है। जनता का, जनता के लिए और जनता के द्वारा स्थापित शासन जो कि लोकतंत्र की मूलभूत संकल्पना है। वह वास्तविक रूप में तभी पूर्ण हो सकती है, जब महिलाओं को जो कि देश की आबादी का आधा हिस्सा है, राजनीतिक क्षेत्र में भागीदारी करने का समान

अवसर मिले।

*सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
राजकीय कन्या महाविद्यालय, करौली

संदर्भ ग्रंथ सूचीः—

1. उषा नारायण, ''वूमन पालिटिकल एमपावरमेंट :—इम्पेरेटिवस एण्ड चैलेंज'', मैन स्ट्रीम, अप्रैल 10,1999, पे. 7
2. जे.पी.सिह, '' इंडियान डेमोक्रेसी एण्ड एमपावरमेंट ऑफ वूमन'' द इडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एउमिनस्टेशन अक्टू., दिस. न. 4, 2000 पे सं. 619
3. आमंड, जी.ए. वर्बा, सिविक कल्चर, प्रिंसटन, यूनिवर्सिटी प्रेस, 1972 पे. 161
4. नीरोज सिंन्हा (सम्पा.) ''वूमन इन इडियन पालिटिक्स : एमपावरमेंट ऑफ वून थ्रो पॉलिटिकल पार्टीशिपेशन, ''ज्ञान पब्लिशिग, नई दिल्ली 2000 पे दृ 17—18
5. थॉमस, पी., इडियन वूमन थ्रू द ऐज, एशिया पब्लिशिंग हाउस बाम्बे, 1964, पे. 49
6. के.एस. सक्सेना, वूमन पार्टिशियन इन इण्डिया, सब लाइम पब्लिकेसंस जयपुर, 1999 पे. 108
7. विद्या जैन (स.) ''वूमन मीडिया एण्ड वायलेंस, रावत पब्लिकेशंस , जयपुर 2016, पे. 13—27
8. रचना सुचिन्मयी, समसामयिक राजनीतिक मुद्दे, रावत पब्लिकेशंस जयपुर पें. 137—142
9. बी.एल. फडिया, भारतीय शासन एवं राजनीति, भारतीय राजनीति में लैंगिक सहभागिता, साहित्य भवन पब्लि. आगरा, 2019 पें. 885— 890
10. ग्लोबल जेंडर गेप रिपोर्ट, 2020 वर्ल्ड इकानामिक फोरम , स्विजरलैंड पें. 9
11. रामेश्वरी पण्ड्या, वुमन इन चेंजिग इण्डिया, सीरियल पब्लिकेशन नई दिल्ली , 2008